मियाँ
बीवी के
हुक़ूक़
हज़रत मौलाना अबदुल ग़नी

بسم الله الرحمن الرحيم

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम.

मियां-बीवी के हुक़ूक़

(पति-पत्नी के अधिकार व कर्त्तव्य)

लेखक

हज़रत मौलाना मुफ़्ती अब्दुल ग़नी साहिब

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो प्रा. लि.

422, मटिया महल, जामा मस्जिद, दिल्ली-६

फ़ोन. 3265406, फ़ैक्स. (011) 3279998

किताब : मियां बीवी के हुकूक़

लेखक : हज़रत मौलाना मुफ़्ती अब्दुल ग़नी साहब

संयोजक : अलहाज मुहम्मद नासिर ख़ान

प्रूफ़ रीडिंग : मुहम्मद एजाज़ शादाब

Edition : **2015**

فرید بک ڈپو (پرائیویٹ) لمٹیڈ
FARID BOOK DEPOT(Pvt.)Ltd.
2158, M.P. Street, Pataudi House, Darya Ganj, New Delhi-2

विषय सूची

जब ज़ालिमों के पित्ते पानी होंगे

दोस्तों के बार-बार कहने पर मियां-बीवी के सही और शरई हक़ अलग-अलग किताबों से इस किताब में इकट्ठे किए गए हैं ताकि मियां-बीवी अपने वाजिब हक़ को समझ कर अदा कर सकें। इस पर अम्ल कर के ज़ुल्म से बच सकें और किसी को किसी की शिकायत का मौक़ा न मिले। अगर किसी का शौहर अपने वाजिब हक़ से ज़्यादा निभा रहा हो या किसी की बीवी अपनी ख़ुशी से अपने शौहर की वाजिब हक़ से ज़्यादा ख़िदमत कर रही हो तो वे अल्लाह तआला की इस बड़ी नेमत का शुक्र अदा करते रहें और अगर इनमें से कोई अपने वाजिब हक़ पूरी तरह नहीं निभाता या ग़ैर वाजिब हक़ को निभाने के लिए ज़बरदस्ती करता है तो वह ज़ालिम ख़ुदा का दुश्मन है, दुनिया में क़ाज़ी हक़ को ज़बरदस्ती पूरा कराएगा और ज़बरदस्ती से रोकेगा। अक्सर मर्द तो अपने हक़ को ज़बरदस्ती समझ लेते हैं और करवा सकते हैं, लेकिन औरत का अदालत के सिवा कोई सहारा नहीं और इसकी मांग करते रहने के अलावा कोई चारा नहीं। अगर मुसलमानों की बदक़िस्मती से अदालत नहीं है तो ज़रा सब्र करें और जैसे भी हो निभाएं।

क़ियामत के दिन, जब बड़े-बड़े ज़ालिम और घमंडियों के पित्ते पानी होंगे तब नमाज़ के बाद इसी का हिसाब होगा। रब्बुल-आलमीन उससे पूरा बदला लेंगे। मज़्लूम के सब गुनाह ज़ालिम को और ज़ालिम की सब नेकियां मज़्लूम को देंगे जबकि ज़ालिम को जन्नत की ख़ुश्बू भी न मिल सकेगी।

अह्क़र

मुहम्मद ग़नी ग़ुफ़िर-लहु

रोटी-कपड़ा-मकान

निकाह के वक़्त से मर्द पर तीन चीज़ें वाजिब हो जाती हैं--बीवी का खाना कपड़े और रहने का मकान, चाहे औरत कितनी ही मालदार हो। हां, अगर औरत बुलाने के बावजूद भी बिला वजह, अपने शौहर के घर लौट कर न आए, खाना कपड़ा मर्द पर वाजिब नहीं होगा।

अगर मर्द की इजाज़त से माँ-बाप या किसी सगे भाई बहन के घर गई है तब भी इतने दिन के ख़ाने कपड़े की हक़दार है।

बीमारी के दिनों का खाना कपड़ा भी मर्द के ज़िम्मे है चाहे शौहर के घर बीमार हो या मैके में। लेकिन ऐसी हालत में भी ख़ाविंद अपने घर बुलाए और औरत बिना किसी शरई हक़ के जाने से मना कर दे तो खाने कपड़े की हक़दार नहीं रहती। --दुर्रे मुख़्तार

हज के सफ़र के दिनों का खाना कपड़ा मर्द के ज़िम्मे नहीं है। हां, अगर मर्द के साथ गई तो मर्द के ज़िम्मे होगा और अगर मर्द ख़ुद ले जाए तो किराया भी मर्द के ज़िम्मे होगा। --दुर्रे मुख़्तार व शामी

सफ़ाई और ज़ीनत की चीज़ें

सफ़ाई और ख़ूबसूरती की सारी चीज़ें जैसे तेल, कंघी, उबटन, साबुन, खुली वग़ैरह और इत्र मर्द के ज़िम्मे है। मिस्सी, पान, तम्बाकू की अगर किसी को आदत हो तो मर्द के ज़िम्मे नहीं उस को इख़्तियार है, और ज़ेवर भी मर्द के ज़िम्मे वाजिब नही मर्द की मर्ज़ी है बनवाये या न बनवाए।

नोट--अपनी गुंजाइश के मुताबिक़ बनवा दे तो बेहतर है। अगर बोझ मालूम हो तो औरत को राज़ी करने के लिए उसके महर में से बनवाकर उस की ख़ुशी को पूरा कर सकता है।

निकाह की शर्तें

जिन बातों, वायदों और शर्तों पर निकाह किया है, उनको पूरा करना भी वाजिब है। --बुख़ारी शरीफ़

औरतों के दिल को राज़ी करने के लिए शर्तों में वह शर्त जो पूरी की जाने की ज़्यादा हक़दार है वह है जिससे तुम ने शर्मगाह (स्त्री के गुप्तांग) को हलाल (अपने लिए वैध) किया है। --बुख़ारी

बच्चे को दूध पिलाना

बच्चे को दूध पिलाना ज़रूरी नहीं लेकिन दयानतदारी की रू से वाजिब है और माएं अपनी औलाद को दूध पिलायें।

अगर बाप इस क़ाबिल नहीं कि दूध पिलाने वाली को रख सके या माँ के अलावा और किसी का दूध बच्चे को नहीं भाता तो हर हालत में औरत ही पर दूध पिलाना वाजिब होता है।

अगर दूध पिलाने वाली से दूध पिलवाया जाए तो वह माँ के सामने और उसकी निगरानी में ही पिलाया जाए। माँ के पास रहना ज़रूरी है।

--शामी, दुर्रे मुख़्तार

माँ को औलाद की वजह से किसी तरह का नुक़्सान न पहुंचाया जाए, न माँ औलाद के ज़रिए बाप को नुक़्सान पहुंचाये और न दोनों अपने बच्चे को नुक़्सान पहुंचाएं।

दवा इलाज का ख़र्चा

दवा इलाज, डाक्टर, हकीमों और वैद्यों वग़ैरह का ख़र्चा मर्द के ज़िम्मे वाजिब नहीं है। लेकिन अगर वह चाहे तो दे सकता है।

--आलमगीरी, दुर्रे मुख़्तार, फ़तहुल्क़दीर वहरुर्राइक़

लेकिन क्योंकि हिन्दुस्तान में यह ख़र्चा भी रिवाजन ज़रूरी हो गया है और कुछ इस तरह से ज़रूरी हो गया है कि यह भी निकाह की एक शर्त सा बन गया है, इसलिए औरतें इस की मांग भी करती हैं और मर्द भी इसे अपनी ज़िम्मेदारी समझते हैं। जो मर्द इससे लापरवाही करता है उसको मलामत की जाती है और उसे ज़ालिम समझा जाता है। यहां तक कि अगर पहले से यह मालूम हो तो कोई औरत निकाह के लिए कभी न तैयार होगी। इसलिए शरई तौर पर वाजिब न हो कर रिवाज की वजह से वाजिब हो गया। इसी तरह हर वह ख़र्चा जो दुनिया में मर्द के ज़िम्मे रिवाज की वजह से वाजिब हो गया हो वह मर्द के ज़िम्मे वाजिब होगा और हर जगह और ज़माने और क़ौम का रिवाज अलग-अलग होता है। सही क़ौल के मुताबिक़ दाई-जनाई का ख़र्चा मर्द ही के ज़िम्मे है। --शामी

क़रीबी रिश्तेदारों से मिलने का हक़

औरत शौहर की इजाज़त पर माँ-बाप से हफ़्ते में एक बार और दूसरे मेहरम[1] से साल में एक बार मिल सकती है। कुछ लोग कहते हैं कि एक महीने में एक बार लेकिन सही क़ौल यह है कि कभी-कभी दिल चाहने पर जा कर मिल सकती है। इसी तरह वे भी आ कर मिल सकते हैं। मर्द को बिल्कुल मना करने का हक़ नहीं है। हां इससे जल्दी मिलने और ज़्यादा ठहरने को मना कर सकता है। अगर मिलने से बिल्कुल मना करे तो उसकी बात मानना जायज़ नहीं और बग़ैर उसकी इजाज़त, तरीक़े के

१. मेहरम उन रिश्तेदारों को कहते हैं जिन से निकाह जायज़ न हो।

मुताबिक़ चाहे वे काफ़िर ही क्यों न हों उनसे मिलने जा सकती है और वे आ सकते हैं। क्योंकि कता रहम[1] बड़ा ज़ुल्म और हराम है लेकिन मना करने पर चले जाने से वापसी तक शौहर से खाने कपड़े की हक़दार न रहेगी। --शामी

लेकिन 'हाशियतुल मदनी' में है कि हक़दार रहेगी। इसमें नाफ़रमानी नहीं है।

सही बात यह है कि मर्द मेहरम को औरत के पास घर में आने से नहीं रोक सकता। चाहे घर मर्द का हो तब भी उसको यह हक़ नहीं कि मेहरम को अन्दर आने से मना करें। हां रात को ठहरने या किसी वजह से ज़्यादा ठहरने को मना कर सकता है (शामी)। और मर्द मेहरम को थोड़ी देर के लिए देखने और बातचीत करने से मना नहीं कर सकता। इसलिए कि इसमें 'क़ता रहम' है। --हिदाया

औरत को अपने मेहरम की बीमारपुर्सी और ताज़ीयत[2] के लिए जाने का भी हक़ और इजाज़त है। अगर माँ-बाप लाचार बीमार हों या ज़्यादा बूढ़े या अपाहिज हो गए हों और कोई उनकी देखभाल करने वाला व ख़िदमत करने वाला नहीं है तो औरत के लिए ज़रूरी है कि वह उनकी ज़रूरत के मुताबिक़ देखभाल और ख़िदमत करे। अगर हर दिन जाने की ज़रूरत पड़े तब भी चाहे माँ-बाप मुसलमान न हों (यानी काफ़िर हों) या मर्द मना करे फिर भी यह ज़रूरी है। मर्द को मना करने का हक़ नहीं है। (दुर्रे मुख़्तार, शामी) और खाने कपड़े की हक़दार रहेगी, क्योंकि इसमें नाफ़रमानी नहीं है।

--हाशियतुल मदनी

---

१. सम्बन्ध विच्छेद करना, सगे सम्बन्धियों से न मिलना।

२. किसी की मौत पर अपनाइयत या हमदर्दी के नाते जाना।

ग़ैर मेहरम यानी ऐसा रिश्तेदार जिससे निकाह जायज़ हो, के पास जाने से, तक़रीबों, जैसे शादी ब्याह मेले ठेले वग़ैरह में जाने से अगर मर्द चाहे तो मना कर सकता है। 'मजालिसे मम्नूआ' यानी नाच-रंग और ऐसी ही बेहयाई की महफ़िलों में जाने की इजाज़त देना नाजायज़ है। अगर इजाज़त देगा तो दोनों गुनाहगार होंगे (दुर्रे मुख़्तार, शामी) अगर ससुराल के लोग बदमाश और बद-अख़्लाक़ हों, चोरी या झगड़े वग़ैरह का डर हो तो अपने सामने मिला सकता है और बातचीत करा सकता है। बग़ैर किसी 'शरई-उज़्र'[1] के यह रुकावट डालना सख़्त ज़ुल्म है, बहुत बुरा है।

(अज़ीज़ुल फ़तावा)

मकान की शर्तें

अगर कोई बड़ी वजह और सख़्त मजबूरी न हो तो मर्द पर वाजिब है कि जहां खुद रहता हो, वहां औरत को अपने पास ही रखे। बल्कि अगर कोई रुकावट की वजह न हो तो दोनों का एक ही बिस्तर पर लेटना मुस्तहब[2] है। --अबूदाऊद, मुस्लिम

रहने के मकान की दो शर्तें हैं

(१) नेक लोगों का पड़ोस। (२) अकेलेपन की घबराहट और दहशत

---

१. किसी शरई काम न करने की ऐसी वजह जिसे शरीअ़त ने जायज़ ठहराया हो।

२. ऐसा काम जिसके न करने पर गुनाह न हो और करने पर बहुत सवाब हो।

का न होना। मकान ऐसा हो कि अकेलेपन की वजह से औरत को उससे घबराहट और दहशत न हो। क्योंकि इसमें नुक़्सान है। अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं कि 'इन को तंग करने की ग़रज़ से तक्लीफ़ न पहुंचाओ'।

अगर ये शर्तें न हों तो फिर चोरी या और किसी तरह की बेइज़्ज़ती के डर की वजह से औरत के पास किसी मूनिस[1] को या किसी मूनिस के पास औरत को रखना भी वाजिब है। --दुर्रे मुख़्तार, शामी

अगर औरत सास, ननद, सौत, सौतेली औलाद (संतान), देवर जेठ, ससुर वग़ैरह के दुख व तक्लीफ़ की शिकायत करे और मांग करे तो उसे तन्हा मकान में रखना वाजिब होगा। (अगरचे माँ-बाप साथ रहने का हुक्म भी दें)। अगर मकान में अपनी हद के अन्दर सिर्फ़ आड़ ही कर दी जाए तो शरीफ़ आदमियों के लिए यही अलैहदगी काफ़ी है। मतलब यह है कि गुज़ारे के लायक़ मकान दिया जायेगा और तक्लीफ़ को भी दूर किया जायेगा।

इसी तरह मर्द को भी हक़ है कि औरत के रिश्तेदारों को इस घर में रहने से मना करे (शामी)। मर्द बग़ैर मर्ज़ी पूरा भरोसा दिलाए और कुल महर मुअ़ज्जल[2] व मुवज्जल[3] के अदा किए बिना औरत को उसके शहर से बाहर ले जाने पर मजबूर नहीं कर सकता।

फ़तवा आलमगीरी (किताब) में है कि अगर मर्द कुल महर भी दे दे तब भी औरत को उसके शहर से बाहर सफ़र में नहीं ले जा सकता।

अगर औरत मारपीट या और किसी तक्लीफ़ की शिकायत करे तो पड़ोसियों की गवाही लेकर क़ाज़ी उसे इस ग़लती की सज़ा देगा।

---

१. हितैषी, सहेली।

२. जल्दी दी जाने वाली महर (स्त्री धन)

३. देर से दी जाने वाली महर।

अगर औरत यह दरख़्वास्त करे कि इस मकान के पड़ोसी क़ाबिले यक़ीन (विश्वास करने योग्य) नहीं हैं या मर्द के तरफ़दार हैं इसलिए गवाही नहीं देते तो क़ाज़ी औरत को वहां नहीं छोड़ेगा बल्कि मर्द को उस मुहल्ले में मकान लेने का हुक्म देगा जिसके लोग नेक हों और मर्द की तरफ़दारी न करें। क्योंकि वह घर जिसके रहने वाले नेक न हों शरई तौर पर रहने के क़ाबिल नहीं।

--शामी

नान नफ़्क़े की तफ़्सील

(रोटी-कपड़े-मकान के ख़र्चे के बारे में तफ़्सीली जानकारी)

आदमियों के तीन दर्जे हैं

(१) अमीर और दौलत व जायदाद वाले लोग,

(२) औसत दर्जे के मालदार और

(३) ग़रीब। इस बारे में जानी मानी रिवायत में है कि जैसी हालत मर्द की होगी उसी के मुताबिक़ वह खाना कपड़ा देगा यानी अगर मर्द अमीर हो तो अमीरों की तरह अगर औसत दर्जे का है तो औसत दर्जे वालों की तरह और अगर ग़रीब है तो ग़रीबों की तरह रोटी-कपड़ा और मकान देना पड़ेगा, एक दूसरी रिवायत में है कि मर्द और औरत दोनों की हालत के मुताबिक़ रोटी कपड़ा दिया जाएगा। जैसे अगर मर्द अमीर है और औरत ग़रीब ख़ानदान की है तो औसत दर्जे के लोगों की तरह रोटी, कपड़ा और मकान दे सकता है।

--शामी।

लेकिन फिर भी मुस्तहब यह है कि अमीरों की तरह ही दे जैसा ख़ुद

खाये वैसा ही खिलाए, और जैसा पहने वैसा पहनाए।

हर शख़्स अपने-अपने दर्जे के मुवाफ़िक़ हर मौसम के एतिबार से गर्म व ठंडे कपड़े रिवाज व ज़रूरत के मुताबिक़ दे। इसके बारे में हुक्म इस तरह है—अमीरों के ज़िम्मे रेशमी और ऊनी बढ़िया क़िस्म के कपड़े, औसत दर्जे पर टसरी और बढ़िया सूती कपड़े जो बिल्कुल आम हों, ग़रीबों पर मामूली सूती कपड़े जो बिल्कुल आम हों, वाजिब हैं। इसी तरह खाने में अमीर और बड़े आदमियों के ज़िम्मे बढ़िया ख़ाने जैसे मुर्ग़, बटेर वग़ैरह का गोश्त (मांस)। औसत क़िस्म के खाने जैसे बकरे वग़ैरह का गोश्त और ग़रीबों के ज़िम्मे ज़रा घटिया क़िस्म के खाने जैसे बड़े का गोश्त, दाल सब्ज़ी वग़ैरह। इसी तरह मकान के बारे में ज़िक्र है और इसी तरह हालत के मुताबिक़ मकान के बारे में तफ़सील है। —शामी

नौकरानी का ख़र्चा

(१) अगर मर्द अमीर है और औरत भी बड़े घर की है तो इमाम अबू यूसुफ़ (रह.) के मुताबिक़ मर्द को दो नौकरानियां रखनी पड़ेंगी ताकि वह अपने घर और बाहर की दोनों ज़रूरतों को पूरा कर सकें लेकिन इमाम अबू हनीफ़ा (रह.) के नज़दीक बस एक ही नौकरानी काफ़ी है।

(२) अगर मर्द काफ़ी मालदार है औरत भी उसी तरह है यानी औरत उन औरतों में से है जो अक्सर ख़िदमती काम अपने हाथ से नहीं करतीं, उसको ऐसे कामों की आदत नहीं है तो अगर औरत चाहे तो पका पकाया खाना या एक नौकरानी का ख़र्चा मर्द को देना होगा। जिससे वह अपनी इस तरह की ख़िदमत ले सके जैसे झाड़ू दिलवाना, बर्तन धुलवाना, घर पुतवाना,

पानी भरवाना, कपड़े धुलवाना, कपड़े सिलवाना, रोटी पकवाना वग़ैरह।

जिस शख़्स के पास अपनी ज़रूरी ज़रूरतों को पूरा करने के बाद भी पैसा बचता है और उस पर ज़कात वाजिब न हो, साहिबे युस्र[1] यानी वह मालदार है।

नोट--रिवाज के मुताबिक़ साहिबे युस्र पर धोबन की धुलाई, दर्ज़ी की सिलाई मर्द के ज़िम्मे होगी और अगर मर्द ग़रीब है तो मर्द के ज़िम्मे सिर्फ़ साबुन, पानी और सीने का सामान ला देना ज़रूरी है और खुद धोए और खुद सिए।

अगर मर्द ग़रीब है तब

अगर मर्द ग़रीब है तब उस पर नौकरानी का ख़र्चा वाजिब नहीं, बल्कि औरत ही घर के सारे काम खुद करेगी। यह अख़्लाक़न उस पर वाजिब है।

(३) अगर मर्द ग़रीब है यानी एक नौकरानी का ख़र्च भी सहन नहीं कर सकता और पका पकाया खाना देने की भी ताक़त नहीं रखता इस के साथ-साथ औरत भी ग़रीब घराने की है जो घर का काम-काज करने में कोई शर्म महसूस नहीं करती और उसे इन कामों को करने की आदत भी है तो खाने-पकाने वग़ैरह का जितना काम वह कर सकती है, अपने हाथ से करना उस पर अख़्लाक़न वाजिब है।

मर्द के ज़िम्मे सिर्फ़ सामान ला देना ज़रूरी है। औरत अपने हाथ से

---

१. साहिबे युस्र : वह मुसलमान जो मालदार तो हो लेकिन इतना नहीं कि उस पर ज़कात फ़र्ज़ हो।

पकाए, खाए और अपने घर का काम-काज करे। ग़रीबी और तंगी के वक़्त जब लौंडियां[1] नहीं थी तो रसूलुल्लाह सल्ल. ने हज़रत अली और फ़ातिमा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हुमा में इसी तरह काम बांट दिया था। हां अगर औरत इन्कार कर दे तो ज़बरदस्ती[2] भी नहीं कर सकता। अगर सालन न हो तो रोटी बिना सालन ही दे दिया करे।

दुर्रे मुख़्तार, शामी व हाशियतुल्मदनी[3] में है कि घी और दूध दे ताकि यह उससे रोटी खा लिया करे।

अगर मर्द ग़रीब है तो फिर इस पर नौकरानी का ख़र्चा वाजिब नहीं है बल्कि औरत खुद अपने लिए पकाए खाए और औरत को अपने शौहर और उसके बच्चों की ख़िदमत करना उसकी खुद की मर्ज़ी[4] पर है वह चाहे तो करे या न करे यह उस पर वाजिब नहीं है।

नोट--सभी उलमा का यह ख़्याल है कि आज़ाद औरत किसी की लौंडी या नौकरानी नहीं होती और न ही किसी ख़िदमत के बदले में उसे नान-नफ़्क़ा दिया जाता है। बल्कि औरत का दर्जा यह है कि वह सिर्फ़ अपने आप को मर्द के घर में मर्द के सुपुर्द कर देने वाली, अपने आप को (नफ़्स को) मर्द के लिए रोकने वाली और उसकी इज़्ज़त व आबरू की हिफ़ाज़त करने वाली होती है। औरत की सारी ज़रूरतों की किफ़ालत और ज़िम्मेदारी मर्द पर वाजिब है।

मगर चूंकि समाजी ज़िंदगी में शरीक भी है और मर्द लाचार है तो इन

---

१ दासी

२ क्योंकि कुछ उलमा (विद्वान) कहते है कि हुजूर सल्ल ने किसी औरत को घरेलू काम-काज के बारे में हुक्म नहीं दिया और हजरत फातिमा (रजि) व दूसरी सहाबी औरतों ने जो घरेलू काम काज किया वह सिर्फ गरीबी और आदत की वजह से किया था न कि किसी नबी या शराई हुक्म की वजह से। और इमाम मुहम्मद रह कहते है कि अगर मर्द गरीब है, फिर भी औरत की नौकरानी का खर्च उठायेगा। शामी

3 किताब के नाम।

४ इच्छा।

दोनों में काम इस तरह बांटे जायेंगे कि घर के बाहर के काम मर्द के ज़िम्मे और घर के अन्दर के काम अख़्लाक़न (ज़रूरी नहीं है) औरत के ज़िम्मे होंगे, इसीलिए औरत इसके बदले कोई मज़दूरी नहीं ले सकती। यानी अगर मर्द ग़रीब है तो औरत पर अपनी ज़रूरत ख़ुद पूरी करना अख़्लाक़न व समाजी ज़िम्मेदारी के नाते वाजिब है इसलिए इस के बदले मज़दूरी नहीं ले सकती। लेकिन यह औरत की रज़ामन्दी पर है, किसी का उस पर ज़ोर नहीं, हां औरत का इन्कार करना समाजी ज़िंदगी व ज़िम्मेदारी के ख़िलाफ़ और गुनाह होगा।

औरत पर अपने ग़रीब शौहर और बच्चों की ख़िदमत भी मुस्तहब है। हां औरत पर उसकी ताक़त और आदत से ज़्यादा बोझ डाल देना जिससे उसे तंगी और तक्लीफ़ हो सख़्त ज़ुल्म है। बस जिस और जितने काम की आदत हो वही काम उसके ज़िम्मे किए जायेंगे।

यह भी ध्यान रहे कि हर तब्क़े की, शहरी क़स्बे में रहने वाली और देहाती औरतों के रहन-सहन के ढंग अलग-अलग होते हैं और उनकी आदत में भी फ़र्क़ होता है। शौहर की हालत बदल जाने से ख़र्चा भी बदल जाएगा यानी मालदार हो जाने पर एक नौकरानी का ख़र्चा वह उठाएगा और औरत को मांग करने का हक़ होगा। --दुर्रे मुख़्तार, शामी

औलाद के लिए नौकर

एक नौकर का ख़र्चा तो सिर्फ़ औरत की ख़िदमत के लिए मर्द के ज़िम्मे है (जिसके बारे में ऊपर बताया जा चुका।) अगर बाल-बच्चे (औलाद) हों तो उनकी ख़िदमत और खाना पकाने वग़ैरह के लिए अगर एक नौकर काफ़ी न हो तो दूसरे नौकर का ख़र्चा भी बर्दाश्त करना पड़ेगा। --शामी

अगर मर्द ग़रीब हो तो माँ को खुद अपने बच्चों की ख़िदमत करनी चाहिए, यह मुस्तहब[1] है।

बीमार औरत का नफ़्क़ा

अगर औरत बीमार है तो उसकी देखभाल के लिए भी हर हालत में एक नौकरानी का ख़र्चा मर्द पर है। --शामी

बीमारी में औरत को पका-पकाया खाना हर हालत में दिया जाएगा।
--दुर्रे मुख़्तार, शामी

नोट--अगर मर्द पका-पकाया खाना और सिला-सिलाया कपड़ा बाज़ार से ख़रीद कर बीवी बच्चों को ला दे और किसी रिश्तेदार से पूरे तौर पर ख़िदमत और देखभाल करा सके तो किसी नौकर की भी ज़रूरत नहीं रहेगी। इसके अलावा बाज़ ख़िदमतें कुछ पैसे दे कर भी कराई जा सकती हैं।

नोट--मर्द औरत के लिए ऐसी नौकरानी नहीं रख सकता, जिसको औरत पसन्द न करे। हां, अगर औरत की पसन्द की नौकरानी ख़ियानत करने वाली है तो अलग कर सकता है। --दुर्रे मुख़्तार, शामी

बंधे हुए ख़र्च में से अगर बचे

हर साल या महीने या दिन पर मुक़र्रर ख़र्च (बंधा हुआ ख़र्च) दिया जाता हो तो जितना औरत अपनी समझ बूझ और कम ख़र्ची से बचा ले, औरत ही उसकी मालिक है, मर्द को उससे कोई मतलब ही न होगा। और

---

१. वह काम या बात जिस के करने पर बहुत सवाब हो लेकिन न करने पर अज़ाब बिल्कुल न हो।

न ही मर्द उसे अगले महीने या साल के ख़र्चे में शामिल कर सकता है।

--दुर्रे मुख़्तार

और अगर बग़ैर औरत की ख़ियानत के कम पड़े तो पूरा करना पड़ेगा।

--दुर्रे मुख़्तार, शामी

यानी मर्द को ख़र्च पूरा करना पड़ेगा, जबकि वह बग़ैर औरत के बेईमानी किए हुए कम पड़ा हो।

मर्द ने जो चीज़ें औरत को तोहफ़े के तौर पर दी हों उनकी भी औरत ही मालिक है, अब उनका वापस लेना हराम होगा।

बीवी-बच्चों को तक्लीफ़ नहीं

अगर किसी शख़्स के पास पैसे इतने कम हैं कि अगर वह माँ-बाप की ख़िदमत पर ख़र्च करे तो बीवी-बच्चों को तक्लीफ़ होने लगे तो उस शख़्स के लिए यह जायज़ नहीं कि वह बीवी-बच्चों को तक्लीफ़ दे और माँ-बाप पर ख़र्च करे। हां, अगर मुहताज व अपाहिज हों तो बाल-बच्चों के साथ रखना पड़ेगा।

खाना कपड़ा मकान न देने पर

अगर कोई शख़्स रोटी, कपड़ा और रहने के लिए मकान न दे सकता हो, देने की ताक़त न रखता हो, होते हुए भी न देता हो, छिप गया हो तो इमाम मालिक के फ़त्वे के मुवाफ़िक़ इमाम अबू-हनीफ़ा के नज़दीक भी औरत अपना निकाह तुड़वा सकती है। क़ाज़ी पहले तो खाना, कपड़ा व

मकान देने का हुक्म देगा, वरना फिर तलाक़ दिलवायेगा या ख़ुद निकाह तोड़ देगा (रद्द कर देगा)। अगर क़ाज़ी नहीं है तो तीन बा-असर पंचों की पंचायत भी फ़ैसला, शर्तों के मुताबिक़ कर सकती है।

कफ़न दफ़न का ख़र्च

जिस औरत का रोटी कपड़ा व मकान मर्द के ज़िम्मे है उसकी तजहीज़ व तकफ़ीन[1] भी मर्द के ज़िम्मे होगी।

चाहे वह अपना माल छोड़ कर मरी हो। वह औरत जिसकी रुख़सती (विदाई) न हुई हो यानी जो अपने शौहर के घर न गई हो और नाफ़रमान औरत की तजहीज़ व तकफ़ीन मर्द के ज़िम्मे नहीं है।

--दुर्रे मुख़्तार, शामी

जहेज़ का सामान

औरत जहेज़ की अकेली और सिर्फ़ अकेली मालिक है मर्द का उस पर बग़ैर इजाज़त क़ब्ज़ा करना, उस से नफ़ा उठाना या उसे इस्तिमाल करना जायज़ नहीं है, हराम है। साहिबे नहर का क़ौल सही नहीं है।

--शामी व ग़ायतुल औतार

जब तक महरे मुअ़ज्जल न दे

अगर किसी औरत का महर मुअ़ज्जल[2] मर्द के पूरे माल के बराबर हो और मर्द महर अदा करने से पहले फ़र्ज़ हज करे या फ़र्ज़ ज़कात दे तो जायज़ नहीं क्योंकि जब तक महरे मुअ़ज्जल अदा न कर दे, न उस पर हज

१. आख़िरी रस्म यानी कफ़न-दफ़न वग़ैरह।
२. वह महर जिसे शादी के फ़ौरन बाद ही अदा करना होता है।

फ़र्ज़ है और न ज़कात और औरत पर भी ज़कात वाजिब नहीं जब तक कि वह महर पर कब्ज़ा न कर ले।

महर के बदले में

औरत को यह हक़ है कि अदालत दीवानी में, वारिसों पर दावा किए बिना, अपने महर के बराबर शौहर के माल पर कब्ज़ा कर सकती है और अपना महर मर्द के छोड़े हुए माल में से ले सकती है चाहे वारिस रज़ामंद हों या न हों। वारिसों को मना करने का हक़ नहीं है।

नोट--अंग्रेज़ी क़ानून क़ानूने इलाही (इस्लामी क़ानून) के ख़िलाफ़ है। क़ानूने इलाही के ख़िलाफ़ अंग्रेज़ी क़ानून पर अम्ल करने वाले सख़्त ज़ालिम व अल्लाह के दुश्मन हैं और उन पर अल्लाह तआला का ग़ज़ब नाज़िल होगा। क़ानून तिमावी यानी तीन बरस के बाद महर देने का क़ानून भी क़ानूने इलाही के ख़िलाफ़ है।

अलगाव के वक़्त

घर गृहस्थी का सामान जो मकान में मौजूद हो और मियां-बीवी या उनके वारिस, उनके बंटवारे में रज़ामंद न हों तो उसका बंटवारा इस तरह होगा कि घर में ज़ो सामान ख़ास तौर पर औरतों के लिए होता है जैसे चर्खा, चक्की, ज़नाने कपड़े और सन्दूक़ इन चीज़ो की मालिक औरत होगी। और इनके अलावा सारी चीज़ों का मालिक मर्द होगा। और मर्द की तरफ़ से शादी की पहली रात से पहले जो रेशमी या सादे जोड़े और ज़ेवर ईद या बरी[1] वग़ैरह में भेजे जाते हैं या इस रात की सुबह जो ज़ेवर या नक़दी

1. शादी ब्याह का एक रिवाज।

दी जाती है वह औरत के लिए हदिया[1] है और औरत इसकी मालिक है। इसी तरह दुल्हन वालों की तरफ़ से दुल्हा को जो जोड़ा वगै़रह पहनाया जाता है, वह मर्द के लिए दहिया है और इसका मालिक मर्द होगा। --शामी

अगर मर्द महरे मुअ़ज्जल न दे

अगर मर्द ने अभी तक महरे मुअ़ज्जल नहीं दिया या अभी कुछ बाक़ी है तो औरत मर्द को अपने नफ़्स से जब चाहे रोक सकती है। बिना इज़ाज़त जब चाहे मर्द के घर से जा सकती है, और बुलाने पर आने से इन्कार कर सकती है मर्द को उस पर क़ाबू रखने का कोई हक़ नहीं है। इमाम अबू हनीफ़ा रह. के नज़दीक औरत खाने कपड़े की भी हक़दार रहेगी क्योंकि यह नाफ़रमानी नहीं है। --शामी

नोट--हिन्दुस्तान में कुंवारी औरतों के लिए महर के अलावा निकाह (शादी) से पहले चढ़ावे के जोड़े और ज़ेवरात वग़ैरह का देना आम हो गया है। इसलिए महर मुअ़ज्जल (जल्दी दिया जाने वाला महर) की तरह ही यह सब चीज़ें भी देना वाजिब हैं। अगर पहले यों ही निकाह हो गया और बाद में रुख़सती (विदा) हुई तो औरत को महर मुअ़ज्जल की तरह इसको मांगने का हक़ है। मतलब यह है कि यह भी महर मुअ़ज्जल की तरह ही है।

महरे मुअ़ज्जल दो तरह की है एक महरे सरीह और दूसरी महरे मस्कूतअ़न्हु। महरे सरीह वह महर है जो निकाह के वक़्त बयान कर दी जाए और महरे मस्कूतअ़न्हु वह है जो बयान न की गई हो बल्कि रिवाज से मुक़र्रर हो अगर मर्द यह महर न देना चाहे तो निकाह के वक़्त ही शर्त लगाये या उसकी क़ीमत मुक़र्रर कर ले।

1. तोहफ़ा, भेंट

निकाह और ख़र्च करने की बड़ाई

हुज़ूर सल्ल. ने फ़रमाया है कि अपने घर वालों पर ख़र्च करने में, अल्लाह के नाम पर जिहाद (लड़ाई) में ख़र्च करने में, गुलाम को आज़ाद करने और ग़रीबों पर सदक़ा करने से बहुत ज़्यादा सवाब होता है।

अगर पाक दामन रहने और औलाद के लिए निकाह किया जाए तो वह नफ़्ली इबादतों से बढ़ कर है। मियां-बीवी के हक़ में मसरूफ़ रहना 'नफ़्ली नमाज़ रोज़े' में मशगूल रहने से कहीं ज़्यादा अच्छा और बेहतर है। लेकिन अगर पाक दामन रहे और औलाद के लिए नहीं है तो सवाब न मिलेगा।

--दुर्रे मुख़्तार

बीवी बच्चे वाले की दो रकअतें कुंवारे की बयासी रकअतों से बेहतर हैं (हदीस)। अगर जुल्म और हक़ न निभा सकने का डर हो तो निकाह करना मकरूह तहरीमी[1] है अगर यक़ीन हो तो हराम है। --दुर्रे मुख़्तार

अगर शरीफ़ औरतों के हक़ पूरी तरह निभाने की हिम्मत व ताक़त नहीं तो फिर किसी मुसलमान लौंडी (दासी) से निकाह करना चाहिए या लौंडी ख़रीदना चाहिए।

क़ुरान में आया है--

'तुम में से जिस शख़्स में आज़ाद मुसलमान औरतों से निकाह करने की ताक़त न हो तो वह उन मुसलमान बांदियों से निकाह करे जो तुम्हारी गुलाम हैं।

अगर यह भी नहीं कर सकता तो फ़स्द[2] खुलवाए और रोज़े पर रोज़ा रखे--

---

१. ऐसा मकरूह (नापसन्द) काम जो हराम तक पहुंच जाए।

२. नस से ख़ून निकलवाना।

बेहतर औरत कौन?

औरत का सबसे पहला और बड़ा हक़ मर्द को हर तरीक़े से ख़ुश रखना है। वही औरत बेहतर है जिसका मेहर कम हो और जो ख़र्च के एतिबार से मर्द पर बोझ न बने। महरे मिस्ल[1] ज़्यादा न हो और गुंजाइश के मुताबिक़ हो। औरत मर्द पर ज़्यादा बोझ न बने और न ही खाना कपड़े की ज़्यादा मांग करे। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि सब से बरकत वाला निकाह वह है जिस में ख़र्चा कम हो।

अपने घर का काम जितना हो सके अपने हाथ से करे और इसको सवाब, ख़ैर व बरकत का काम समझे। घर के कामों में मश्गूल रह कर ख़राब ख़्यालों से अपने आप को बचाए और इसका भी ध्यान रखे कि शौहर का कहना मानने में भलाई और अच्छाई ही है--चाहे शौहर से नाराज़ी भी हो लेकिन फिर भी बातचीत और हर मामले में अदब का ख़्याल

---

१. क्योंकि निकाह से जो महर वाजिब होता है वह महरे मिस्ल ही है और यही महर शरई तौर पर वाजिब है और निकाह के वक़्त तय हुआ, महरे मिस्ल ही है। महरे मिस्ल हर ज़माने हर क़ौम और हर शहर का अलग-अलग होता है। लेकिन बेहतर यह है कि महरे मिस्ल का रिवाज वुस्अ़त यानी ताक़त के अन्दर होना चाहिए। ताक़त से ज़्यादा बड़ाई जताने के लिए महर तय करना मकरूह तहरीमी है।
अगर बड़ाई जताने के लिए न हो तो भी अच्छा नही है। सहाबा किराम रज़ि. का महर भी अलग-अलग था किसी का खजूर की गुठली के बराबर सोना और किसी का इससे ज़्यादा और हुज़ूर सल्ल. व आप के घराने का महर पांच सौ दिरहम से ज़्यादा न था। हज़रत उम्मे हबीबा रज़ि. का महर चार हज़ार दिरहम था जो नजाशी (हब्श के बादशाह) ने अदा किया और एक सहाबी ने अपनी औरत के महरे मिस्ल में क़ीमती एक लाख दिरहम की जायदाद दी। औरत चाहे तो अपने महर में से कम कर सकती है और मर्द भी अपनी ख़ुशी से बढ़ा सकता है। --दुर्रे मुख़्तार

रखे।

हज़रत आइशा सिद्दीका रज़ियल्लाहु तआला अन्हा फ़रमाती हैं कि एक बार हुज़ूर सल्ल. ने फ़रमाया कि ऐ आइशा जब तुम नाराज़ होती हो तो मुझे मालूम हो जाता है और जब तुम नाराज़ नहीं होती रज़ामंद होती हो, तो भी मुझे मालूम हो जाता है। मैंने पूछा, 'या रसूलल्लाह आप को मेरी नाराज़गी और रज़ामंदी कैसे मालूम हो जाती है?' आपने फ़रमाया, जब तुम ख़ुश होती हो तो ला व रब्बि मुहम्मद कहती हो और जब नाराज़ होती हो तो ला व रब्बि इब्राहीम कहती हो। हज़रत आइशा ने कहा 'बेशक' लेकिन या रसूलल्लाह सल्ल. ! मैं नाराज़ी में सिर्फ़ आप के नाम को छोड़ती हूं।'

नोट--औरत को अपने मर्द का नाम ले कर पुकारना मक्रूह है क्योंकि इसमें बेअदबी है। --दुर्रे मुख़्तार

समाजी अच्छाईयां

इमाम ग़ज़ाली रहमतुल्लाहि अलै. ने इहया-उलउलूम (किताब का नाम) में लिखा है कि नान-नफ़्क़े के अलावा औरतों की कम-अक़्ली, कमज़ोरी, मिज़ाज की तेज़ी वग़ैरह का ख़्याल रखते हुए उनसे रहम का बर्ताव करना, उनके नाज़ उठाना और उनसे पहुंची तक्लीफ़ का बर्दाश्त करना भी वाजिब है।

अल्लाह तआला ने इनके हक़ की कितनी बड़ाई की है -- फ़रमाया 'वआशिरुहुन्न बिलमारूफ़--औरतों के साथ अच्छे ढंग से ज़िंदगी बसर करो' और अल्लाह ने इनके हक़ की कितनी बड़ाई की है -- कहा है--वे औरतें तुम से शरई तौर पर एक क़िस्म का मज़बूत अहद ले चुकी हैं और कैसे प्यारे लफ़्ज़ों में कहा, और पास बैठने वालों के साथ (यानी बीवी के

साथ भी एहसान करो) क्योंकि उन्होंने तुमसे बहुत सख़्त और मज़बूत वादा लिया है, और आपने अपने आख़िरी[1] 'हज्जतुलविदा'[2] में कैसे दुख भरे अल्फ़ाज़ में फ़रमाया था और बार-बार कहा था कि इनके साथ नेकी से पेश आते रहना।

१. रसूलुल्लाह सल्ल. ने फ़रमाया, 'जो शख़्स अपनी औरत की बुरी आ़दतों पर सब्र करेगा, उसको अय्यूब अलै. के बराबर अज्र मिलेगा और जो औ़रत अपने शौहर की बुरी आदतों पर सब्र करेगी उसको हज़रत आसिया रज़ि. के बराबर सवाब मिलेगा। --मुस्लिम

२. हज़रत अनस रज़ि. फ़रमाते हैं कि हुज़ूर सल्ल. औरतों पर बहुत ही मेहरबान और रहम करने वाले थे।

३. रसूलुल्लाह सल्ल. ने फ़रमाया, सब से ज़्यादा ईमान वाला वह शख़्स है जो अपनी औरत के साथ नर्मी व मुहब्बत का बर्ताव करे और तुम में बेहतर वह शख़्स है जो अपनी औरत के साथ बेहतर हो, चुनांचे मैं सब से ज़्यादा मुकम्मल ईमान वाला हूं क्योंकि मैं अपनी औरतों के साथ सब से ज़्यादा मेहरबानी और भलाई से पेश आता हूं।

४. हज़रत उमर रज़ि. जो सख़्त मिज़ाज के थे, फ़रमाते थे कि मोमिन को चाहिए कि अपने घर में बच्चों की तरह रहे और अपनी क़ौम में मर्द बन कर रहे।

५. एक हदीस है--जिस की तशरीह इमाम ग़ज़ाली रह. ने इस तरह बयान की है कि अल्लाह तआ़ला ऐसे शख़्स से, जो अपने ख़ानदान के लिए सख़्त दिल हो, सख़्ती से बात करता हो और अपने आप पर घमण्ड करता हो, दुश्मनी रखता है। --मकारिमुल्अख़्लाक़

और 'अबूदाऊद' में है कि ऐसा शख़्स जन्नत में न जाएगा।

---

१. अन्तिम उपदेश। २. हुज़ूर सल्ल. का आख़िरी हज।

६. हुज़ूर सल्ल. ने फ़रमाया 'जो शख़्स अपनी बदखुल्क़ी (बुरे अख़्लाक़ व बुरी आदतों) से अपने ख़ानदान को दुख व तक्लीफ़ पहुंचाएगा, अल्लाह तआला उसकी तौबा और अच्छे काम क़ुबूल न फ़रमाएगा।

७. हज़रत आइशा रजि. से रिवायत है कि अरब की ग्यारह औरतें जमा हुईं और हर एक ने अपने-अपने मर्दों (शौहरों) के हालात और सुलूक के बारे में बताया। ग्यारहवींऔरत ने जिसका नाम उम्मेज़र था अपने मर्द अबूज़र की बहुत तारीफ़ की और कहा कि मैं बकरियों वाले ग़रीब घर की बेटी हूं मैं बहुत ही दुख और तक्लीफ़ में थी, लेकिन अबूज़र ने मुझे ऊंटों वाली, घोड़ों वाली, बाग़ों वाली, खेती वाली, माल वाली, जानवरों वाली और महलों वाली बना दिया दूध के मटके के मटके बिलोए जाते हैं। ज़ेवरों से मेरे कान टूट गये, ज़ेवरों से मुझे लाद दिया और वह खाने खिलाए कि चर्बी से मेरे बाज़ू भर गए। मुझ को बहुत खुश किया। मैं भी बहुत खुश हो गई। मैं टर्राती हूं, बकती हूं, मगर वह बुरा नहीं मानता और न कभी बुरा ही कहता है मैं अपने घर भर की मालिक हूं जिस तरह चाहती हूं, ख़र्च करती हूं उसमें ज़रा सी रोक-टोक नहीं करता। लौंडियां हर वक़्त मेरी ख़िदमत में लगी रहती हैं। मैं बिल्कुल बेफ़िक्र रहती हूं। अबू ज़र ने फ़रमाया है कि उम्मेज़र ख़ूब खा और अपने ख़ानदान को भी खिला। हुज़ूर सल्ल. ने यह क़िस्सा सुन कर फ़रमाया, मैं अपनी बीवियों के लिए ऐसा ही हूं जैसे उम्मेज़र के लिए अबूज़र। लेकिन उसमें यह ऐब था कि वह तालिक़ था मैं तालिक़[1] नहीं हूं।

८. और हुज़ूर सल्ल. ने फ़रमाया, ऐ मुसलमानों, न तो अल्लाह की बंदियों (औरतों) को मारो और न बुरा-भला कहो। --अबूदाऊद

नोट--अगर औरत मार-पीट या और किसी तक्लीफ़ की शिकायत

---

१. तलाक़ देने वाला।

करे तो साबित होने पर क़ाज़ी मर्द को डांटेगा और सज़ा भी देगा।
--शामी

हरदम पाबंदी लगा कर नाक में दम कर देना, दिल को ठेस पहुंचाना, और सख़्ती से बात करना भी ज़ुल्म और तक्लीफ़ देता है और समाजी ज़िन्दगी को बिगाड़ता है।

६. लक़ीत बिन सबरा ने रसूलुल्लाह सल्ल. से कहा कि मेरी बीवी की ज़बान गन्दी है वह गाली-गलोच से बात करती है। और एक शख़्स ने कहा कि मेरी औरत छूने वाले हाथ को नहीं रोकती। आप सल्ल. ने फ़रमाया उस को नसीहत कर उस शख़्स ने जवाब दिया या रसूलल्लाह नसीहत करते-करते थक गया। आप ने फ़रमाया, 'उस को मार-मार कर रोक, मगर लौंडियों की तरह मत मारना। उसने फिर कहा या रसूलल्लाह, 'मार कर भी तंग आ गया।' आपने फ़रमाया 'तलाक़ दे दे।' उसने कहा या रसूलल्लाह औलाद वाली है। और उसका मेरा साथ पुराना है' आपने फ़रमाया तो फिर सब्र कर।

औरत का नाज़ करना

नाज़[1] की वजह से 'अज़वाज मुतहरात'[2] भी हुज़ूर सल्ल. से लौट-पौट कर लिया करती थीं और आप की बात का जवाब दे दिया करती थीं। पूरे दिन बात नहीं करती थीं और अपनी मांगों को ऊंची आवाज़ में उठाती थीं।
--मुस्लिम, बुख़ारी

क्योंकि औरतों को अपने हक़ की मांग करने में सख़्ती करने और
बुख़ारी, मुस्लिम
गिड़गिड़ाने का हक़ है।

१. शेख़ी, अदा, लगावट। २. हुज़ूर सल्ल. की बीवियां।

एक बार हज़रत आइशा रज़ि. और हुज़ूर सल्ल. में कुछ झगड़ा हो गया, और दोनों ने हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि. को जज बनाया। हुज़ूर सल्ल. ने फ़रमाया कि पहले तुम बयान करोगी या पहले मैं बयान करूं। हज़रत आइशा ने कहा, पहले आप बयान कीजिए, लेकिन सच-सच बोलिएगा। यह सुन कर हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि. को गुस्सा आ गया और आपने हज़रत आइशा रज़ि. के तमांचा (थप्पड़) मारा और फ़रमाया ऐ नफ़्स की दुश्मन क्या हुज़ूर सल्ल. झूठ बोल सकते हैं? हज़रत आइशा रज़ि. ने आपके गुस्से की तेज़ी से डर कर हुज़ूर सल्ल. की पीठ के पीछे पनाह ली। हुज़ूर सल्ल. ने अबूबक्र रज़ि. को रोक कर फ़रमाया, 'ऐ अबूबक्र हमने तुम को इसलिए नहीं बुलाया था।' --तब्रानी

क़िस्सा-ए-इफ़्क में आया है कि जब हज़रत आइशा रज़ि. की बराअत (सफ़ाई, छुटकारा) एक महीने बाद अल्लाह ने नाज़िल फ़रमाई तो हज़रत आइशा की 'वालिदा माजिदा'[1] रज़ि. ने फ़रमाया, 'खड़ी हो जाओ और हुज़ूर का शुक्रिया अदा करो।' हज़रत आइशा ने पहले फ़रमाया कि मैं हुज़ूर के शुक्रिए के लिए हरगिज़ न खड़ी होऊंगी और हुज़ूर से कहा, न आप का शुक्रिया है और न किसी और का। मैं उस अल्लाह तआला का शुक्रिया अदा करती हूं जिसने मेरी बराअत नाज़िल फ़रमाई। (बुख़ारी) और फ़तहुलबारी में अस्वद से रिवायत है कि हुज़ूर सल्ल. ने हज़रत आइशा रज़ि. का हाथ थाम लिया। हज़रत आइशा रज़ि. ने गुस्से से हुज़ूर सल्ल. का हाथ झटक कर अपना हाथ छुड़ा लिया। इस पर हज़रत अबूबक्र रज़ि. ने हज़रत आइशा रज़ि. को झिड़का।

प्यारे नबी सल्ल. का तरीक़ा

(१) हुज़ूर सल्ल. हज़रत आइशा रज़ि. को खुश करने के लिए उनकी

---
१ माता।

सहेलियों को गुड़िया खेलने के लिए भेज देते थे और कभी-कभी अपने आप भी पूछते थे 'यह कैसी गुड़िया है?' चुनांचे एक बार एक गुड़िया घोड़े की शक्ल की दिखाई दी, जिसके दो बाजू लगे थे। आपने पूछा 'यह घोड़ा कैसा है और इसके बाजू कैसे हैं?' हज़रत आइशा रज़ि. ने जवाब दिया कि क्या सुलैमान अलै. के घोड़े के बाजू न थे। आप बहुत हंसे। --अबूदाऊद

(२) अक्सर हज़रत आइशा रज़ि. फ़रमाती हैं कि जब हुज़ूर सल्ल. घर में होते तो घर के कामों में औरतों का हाथ बंटाते थे। --बुख़ारी

(३) और एक बार अपनी आड़ में पर्दा कर के हब्शियों का जंगली खेल देर तक दिखाते रहे। बुख़ारी

(४) हज़रत आइशा रज़ि. फ़रमाती हैं कि एक बार मेरी और हुज़ूर सल्ल. की दौड़ हुई। मैं आगे निकल गई। बहुत दिनों के बाद फिर एक बार दौड़ हुई तो हुज़ूर सल्ल. आगे निकल गये, हुज़ूर सल्ल. ने फ़रमाया 'लो यह उस का बदला है। --अबूदाऊद

(५) एक बार अज़वाज मुतह्हरात को खुश करने के लिए आपने मारिया क़िब्तिया लौंडी को अपने ऊपर हराम कर लिया। और एक बार औरतों के कहने से शहद के लिए फ़रमाया कि कभी नहीं पीउंगा। इस पर अल्लाह की तंबीह इस तरह नाज़िल हुई--

'आप इन चीज़ों को अपनी बीवियों की खुशी चाहने के लिए अपने ऊपर हराम क्यों करते हैं।' --कुरआन मजीद

(६) और हुज़ूर सल्ल. ने फ़रमाया कि औरतों से इनकी बेटियों के मामले में (शादी वग़ैरह के बारे में) मश्वरा कर लिया करो। --अबूदाऊद

(७) हुज़ूर सल्ल. ने फ़रमाया कि हर झूठ लिखा जाता है। मगर तीन झूठ नहीं लिखे जाते। पहला वह जो मर्द अपनी बीवी और औलाद को खुश करने के लिए बोले, दूसरा जो दो मुसलमानों में मेल-मिलाप कराने के लिए

बोले, तीसरा वह जो काफ़िरों की लड़ाई में जीतने के लिए बोले।

नोट--अगर औरत के हुस्न में कोई बात पसन्द न हो तो उसका ज़िक्र न करे इससे उसको दुख होगा। अगर एक बात नापसन्द हो तो और बहुत सी बातें पसन्द भी होंगी, बेऐब ख़ुदा है। न औरत के सामने किसी और औरत का हुस्न व जमाल बयान करे इससे भी उस को दुख होगा और औरत को मर्द पर भरोसा नहीं रहेगा। यह भी जाहिली या जानवर पन है कि जब जी भर गया तो औरत जी से उतर गयी बस बेरुख़ी के मामले करने लगे और दुख पर दुख व तक्लीफ़ पर तक्लीफ़ देने लगे। यह बहुत अफ़सोस की बात है। बल्कि ऐसी हालत में तो ख़ूब (खुल) कर हंसी मज़ाक करना वाजिब होगा, जिस से औरत यही समझे कि मेरा मर्द मुझे बहुत चाहता है और उसको मर्द पर पूरा यक़ीन रहे।

नोट--अगर शरीफ़ औरतों के हुकूक़ अदा करने की ताक़त या हिम्मत न हो तो फिर किसी मुसलमान लौंडी (दासी) से निकाह (शादी) करना चाहिए। या लौंडी ख़रीदनी चाहिए। अगर इसकी भी ताक़त न हो तो फ़स्द खुलवाये और रोज़े पर रोज़ा रखे।

दामादी रिश्ता

अल्लाह तआला ने ख़ानदान और दामादी रिश्ते की अज़मत (बड़ाई) का बार-बार ज़िक्र फ़रमाया है और जैसे सात रिश्तों तक ख़ानदानी इज़्ज़त क़ायम रहती है इसी तरह दामादी इज़्ज़त भी सात रिश्तों तक फ़रमा दी है। इसलिए अपने ख़ानदान की तरह दामादी रिश्ते भी वाजिब हैं।

दूसरी हदीस शरीफ़ में है कि निकाह दो ख़ानदान में आपसी प्यार मुहब्बत का बेहतरीन ज़रिया है। यानी मुहब्बत जितनी निकाह से होती है और किसी वजह से नहीं हो सकती, इसलिए शौहर का बीवी के रिश्तेदारों के साथ अपने रिश्तेदारों की तरह मुहब्बत, हमदर्दी करना और उनसे

अच्छे सुलूक से पेश आना भी शरई हक है। और जो बड़े हैं उनका अदब और उनकी फ़रमाबरदारी अपने बड़ों की तरह ही करना चाहिए।

हुजूर सल्ल. ने अपने एक दामाद जिनका नाम अबुल्आस था, की तअ्रीफ़ मिम्बर से की, बावजूद इसके कि वह उस वक़्त तक काफ़िर थे। जब हुजूर सल्ल. मक्के (शहर) में ठहरे थे क़बीला कुरैश के काफ़िरों ने आपको तक्लीफ़ देने के लिए यह तय किया कि हुजूर की तीनों बेटियों को तलाक़ दिलवायी जाए। चुनांचे आपकी दो बेटियों को उसी दिन तलाक़ दिलवाई गई। मगर हुजूर को तक्लीफ़ पहुंचाना अबुल्आस को पसन्द न था। उन्होंने तलाक़ देने से इंकार कर दिया, क़ौम ने उन पर बहुत जुल्म ढाये, मगर उन्होंने तलाक़ न दी। लेकिन हिजरत के बाद यह हुक्म हुआ कि मुसलमान औरत काफ़िर के निकाह में नहीं रह सकती तो हुजूर ने अबुल्आस को यह हुक्म सुना कर फ़रमाया कि अब तुम मेरी लड़की को फ़ौरन उस जगह पहुंचा दो, और मेरे आदमियों के हवाले कर दो। अबुल्आ़स ने वादे के मुताबिक़ सही जगह पर पहुंचा दिया, फिर कई वर्ष के बाद मुसलमान हो कर ख़िदमत में हाज़िर हुए और आप सल्ल. की बेटी को उन्हीं के निकाह में वापस किया गया।

मर्दों के हुक़ूक़

(१) जबकि अल्लाह तआला ने औरतों का रिज़्क़ और दीन व दुनिया की सहूलियतें व आसानियां शौहर के कब्ज़े में कर दी हैं उन पर खाना, कपड़ा, मकान फ़र्ज़ कर के कितने हुक़ूक़ कायम कर दिए हैं, और कैसी-कैसी सहूलियतें पहुंचाई हैं। औरत को जन्नत भी उनके हुक़ूक़ निभाने पर और उन्हीं को राज़ी करने पर मिलेगी। फिर इन के हुक़ूक़ की अज़मत का क्या ठिकाना है बस औरत को चाहिए कि अपने आप को एक लौंडी समझे, शौहर को अपना आक़ा, मालिक समझे ऐसे 'अज़ीम' वसीले की ख़ुशी

हासिल करने को अपना ईमान जाने। और अगर शौहर किसी वक़्त ज़्यादती भी करे तो इतनी बड़ी नेमत के बदले में मिलने वाली ज़्यादती को सब्र से सहे, शिकायतों का पुल न बांधे। यह बहुत बड़ी नाशुक्री है जो औरतों की फ़ितरत है। जहां तक हो इससे बचना वाजिब है और मर्दों को भी चाहिए कि इनकी नाशुक्री का बुरा न मानें। क्योंकि यह आदत इनकी फ़ितरत में है जिसको दूर करना बिल्कुल मुम्किन नहीं है।

हदीसों में है कि हुज़ूर सल्ल. ने फ़रमाया कि मैंने ज़्यादा औरतों को दोज़ख़ में देखा (यानी दोज़ख़ में औरतें ज़्यादा हैं।) औरतों ने पूछा यह क्यों या रसूलल्लाह?' आपने फ़रमाया 'इनकी नाशुक्री की वजह से। 'अगर मर्द उम्र भर इनके साथ एहसान करे और फिर एक भी बात इनकी मर्ज़ी की न करे' नाशुक्री से झट बोल उठती हैं 'मैंने तुम्हारी तरफ़ से आज तक कभी ज़रा सी भी भलाई नहीं देखी।' --बुख़ारी

और एक हदीस में है कि बिला वजह मामूली बातों पर झगड़ने वाले अल्लाह के दुश्मन हैं और उनसे अल्लाह तआला नाराज़ रहता है।

--बुख़ारी

(२) अल्लाह तआला फ़रमाता है, मर्द औरतों के हाकिम हैं और हुकूमत बग़ैर सियासत के नहीं रह सकती इसलिए ऐसा न हो कि शरीर औरतें अपने ये हुकूक़ सहूलियतें और मेहरबानियां देख कर तुम्हारे सर पर चढ़ जाएं और फिर तुमसे जा-बेजा करने और मनवाने पर भी उतारू हो जाएं और तुम्हारे लिए नुक़्सान फ़ित्ना और शैतान का जाल बन जाएं और फिर तुम 'जोरू के ग़ुलाम और वह बे-नकेल का ऊंट होकर रह जाए।' आजकल के पढ़े-लिखे आज़ाद नौजवान मर्द और औरतों को देख लो। इसलिए सियासत से काम लो और ऐसा तरीक़ा अपनाओ कि शरीअत के ख़िलाफ़ हुक्मों में सख़्त बनो और नाजायज़ बातों में सख़्त रोकथाम करो

और समाजी ज़िन्दगी में बहुत ही नर्म रहो। लिहाज़ा बीच का रास्ता अपनाओ।

(३) हुज़ूर सल्ल. फ़रमाते हैं कि औरत टेढ़ी पस्ली से पैदा की गई है इसलिए इसी टेढ़ेपन से फ़ायदा उठाया जाये। सीधा करने का फ़िक्र मत करो वरना टूट जाएगी, और न ही बिल्कुल छोड़ दो, वरना और टेढ़ी हो जाएगी।
--बुख़ारी

इस हदीस से मालूम हुआ कि औरत का टेढ़ापन पैदाइशी है और इसे दूर करना मुम्किन नहीं और सियासत को भी न छोड़ो वरना और टेढ़ी हो जाएगी जिससे मिलजुल कर रहना दूभर हो जाएगा। इसलिए हाकिमाना रोब भी रखे और ज़्यादा बेअदब और नाफ़रमान न होने दे। लेकिन बिल्कुल हव्वा भी न बन जाए। क्योंकि हुज़ूर सल्ल. ने फ़रमाया है कि शरीफ़ मर्दों पर औरतें ग़ालिब आती हैं और रज़ील मर्द औरतों पर ग़ालिब होते हैं।

(४) हुज़ूर सल्ल. ने फ़रमाया कि अगर अल्लाह के सिवाए किसी और को सज्दा जायज़ होता तो मैं औरतों को इनके शौहरों के लिए सज्दे का हुक्म देता। अगर शौहर औरत को पहाड़ उठाने का हुक्म दे तो पहाड़ उठाने के लिए भी तैयार हो जाए।

(५) एक रिवायत है कि अगर मर्द के घावों की पीप और ख़ून, औरत अपनी ज़बान से चाटे तब भी हक़ अदा न होगा।

नोट--इस हदीस में यह बताया गया है कि मर्द का हक़ मिलना बड़ा होता है। इसका मतलब बिल्कुल नहीं कि औरत को यह सब कुछ करना चाहिए, बल्कि यह तो सिर्फ़ मर्दों के हक़ की बड़ाई बताने के लिए इस्तिमाल किया गया है। बहरहाल औरतों पर अपने मर्दों की इज़्ज़त व फ़रमांबरदारी वाजिब है।

(६) हुज़ूर सल्ल. ने फ़रमाया, 'जिस औरत का शौहर (अपने हुकूक़

पूरे न होने की वजह से) उससे नाराज़ हो उसकी नमाज़ क़ुबूल न की जाएगी'।

--बैहक़ी

(७) जो औरत ऐसी हालत में मरे कि उसका शौहर (अपने हक़ की वजह से) उससे खुश रहा तो वह जन्नत में जाएगी। --तिर्मिज़ी

(८) जो औरत अपने शौहर का कहना न माने यानी अपने किसी काम या ज़रूरत की वजह में, उसके बुलाने पर न आए, उस पर अल्लाह और उसके फ़रिश्तों की लानत बरसती है, जब तक कि उसको खुश न करे। अगरचे तनूर पर हो तब भी हाज़िर हो। --तिर्मिज़ी वग़ैरह

शौहर की इताअत[1]

हाकिम, शौहर और माँ-बाप की फ़रमांबरदारी नेक (अच्छे) कामों में
है नाजायज़ बातों, हक़ मारने, नुक़्सान व तक्लीफ़ पहुंचाने वाले कामों या
बातों में नहीं यानी नाजायज़ बातों में किसी भी शख़्स की फ़रमांबरदारी
जायज़ नहीं। इताअत तो सिर्फ़ अच्छे कामों में हुआ करती है।

नोट--अल्लामा जलालुद्दीन सुयूती रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने मिर्क़ातुस्सुऊद
में इन्नमत्ताअ़तु फ़िल्मारूफ़ि (अल हदीस) में फ़रमाया है कि इमाम का हुक्म
शरीअ़त के हुक्म के ताबे' है। यानी इमाम का वही हुक्म सही माना जाएगा
जो 'शरीअ़त के मुताबिक़ सही हो और जिस काम को शरीअ़त ने मना
किया हो, उसे करने का हुक्म नहीं माना जाएगा। अगर इमाम किसी ऐसी
बात का हुक्म दे जो शरई तौर से वाजिब हो तो उसकी फ़रमांबरदारी भी
वाजिब है। अगर किसी ऐसी बात का हुक्म दे जो मुस्तहब हो तो उसमें

---

१. इताअ़त आज्ञा पालन करना, कहना मानना।

इमाम की फ़रमांबरदारी भी मुस्तहब है, वाजिब नहीं। अगर किसी जायज़ बात का हुक्म दे तो उसकी इताअ़त जायज़ है वाजिब नहीं है और न मुस्तहब। अगर किसी मक्रूह बात का हुक्म दे तो इताअ़त मक्रूह है और किसी हराम बात का हुक्म दे तो इताअ़त हराम है। कुछ जाहिल इमाम या सरदार के हर हुक्म को चाहे वह शरअ़न वाजिब हो या न हो, बल्कि मुस्तहब जायज़ या मक्रूह हो तो भी वाजिब ही समझते हैं। यह जिहालत इनको कुफ़्र तक पहुंचा रही है। क्योंकि इसमें हाकिम की कुछ बातों को हुजूर सल्ल. के हुक्म से बरतर समझा जाएगा जो कुफ़्र या मक्रूह और हराम को हलाल बल्कि वाजिब बताएगा, जो कुफ़्र है।

'शामी' में है कि हाकिम की इताअ़त (फ़रमांबरदारी) हर बात में वाजिब है बशर्ते कि गुनाह और शरीअ़त के ख़िलाफ़ न हो और न ही खुल्लम-खुल्ला नुक़्सानदेह व तक्लीफ़देह हो बल्कि फ़ायदेमंद और जायज़ हो।

शरीअ़त की हदें

(१) मर्द औरत के नफ़्स (अपने आप, अपनी काया) का पूरा मालिक है। औरत को अपने नफ़्स के बारे में किसी भी वक़्त में इन्कार करने का हक़ नहीं है लेकिन उन चीज़ों को छोड़ कर जिनको अल्लाह ने हराम किया।

(२) औरत बिना इजाज़त व रज़ामन्दी और बिना किसी वजह व हक़्क़े शरई के मर्द के घर से कहीं बाहर नहीं जा सकती है[1]।

---

१. जैसे मर्द की अदम मौजूदगी (अनुपस्थिति) में घर गिर गया या गिरने का डर है या आग लग जाए या घर का मालिक निकाल दे या रात को अकेले में किसी मय्यत या मौत से डर लगे या अकेले मकान में घबराहट हो या चोरी और

—बाक़ी अगले पृष्ठ पर

(३) न किसी ग़ैर मेरहम को बिना इजाज़त घर में बुला सकती है।

(४) पर्दे में भी, औरत तन्हाई (एकान्त) में किसी ग़ैर मेरहम के साथ नहीं बैठ सकती।

(५) न तन्हाई में किसी ग़ैर मेरहम से बातचीत कर सकती है।

(६) न बिला इजाज़त मर्द के माल में से फ़ुज़ूलख़र्ची और ख़ियानत कर सकती है।

(७) न बिला इजाज़त बनाव सिंगार छोड़ सकती है क्योंकि ज़ीनत मर्द का हक़ है। जैसे मर्द की ज़ीनत, सज-धज औरत का हक़ है।

(८) न बिला इजाज़त नफ़्ली रोज़ा रख सकती है और न तहज्जुद पढ़ सकती है। इन बातों में शौहर की इताअत बिल्कुल वाजिब है। अगर औरत इन बातों में फ़रमांबरदारी न करे तो वह नाफ़रमान कहलाती है। नाजायज़ कामों में वाजिब बातों को छोड़ने में और 'क़ता-रहम'[1] में औरत मर्द की

बेइज़्ज़ती का डर हो, या मर्द ने खाने कपड़े का इंतिज़ाम न किया हो, और मर्द की मौजूदगी में जैसे मर्द ख़ुद निकाल दे, या मर्द की मार-पीट और तक्लीफ़ से या पूरा खाना कपड़ा न देने की वजह से तंग आ गई हो या मर्द के रिश्तेदारों के तक्लीफ़ देने से दुखी हो और न मर्द उनको मना करता हो और न ही उनसे अलैहदा मकान में रखता हो या औरत बीमार है और कोई उसकी देखभाल करने के लिए न हो या मर्द औरत को बेकस व लाचार (असहाय) माँ-बाप से मिलने और ख़िदमत (सेवा) करने या महारिम से मिलने और बीमारपुर्सी (सांत्वना देने) से रोकता है या कोई क़ुसूर व गुनाह या किसी गैर वाजिब काम करने पर ज़बरदस्ती करता है या महरे मुअज्जल (जल्दी दी जाने वाली महर) नहीं दिया या हज्जे फ़र्ज़ किसी मेहरम के साथ या किसी ज़रूरी मसअले की ज़रूरत हो और कोई पूछने वाला न हो, वग़ैरह इन सब हालतों में सख़्त मजबूरी में या शरई ज़रुरत पर, या अपने हक़ की मांग के लिए बग़ैर इजाज़त निकल सकती है। इसकी इजाज़त है।

१. सम्बन्ध-विच्छेद करना।

हरगिज़ फ़रमांबरदारी नहीं कर सकती।

(६) औरत मर्द के माल में से बिना उसकी इजाज़त के किसी को कुछ हदिया के तौर पर नहीं दे सकती। हां रिवाजन और जितना देने की हक़दार है और जिसके देने पर आमतौर पर मर्द भी नहीं रोकते, बस उतना ही दे सकती है। इस का मर्द औरत दोनों को सवाब मिलता है। और मर्द को चाहिए कि रिवाजन बतौर तोहफ़ा वग़ैरह देने की इन को इजाज़त दे दे।

औरत को वह बर्ताव करना चाहिए जिससे मर्द को पूरा-पूरा यक़ीन रहे और हमेशा उससे अपने हक़ की बिना पर ख़ुश रहे और मर्द वह तरीक़ा अपनाये जिससे औरत बेफ़िक्र, ख़ुश-ख़ुर्रम और मुतमइन और नफ़्स व माल की ख़ियानत से बची रहे और ज़रूरत के मुताबिक़ व ठीक ख़र्च कर सके और मर्द लालची व कंजूस है तो फिर मर्द से छुपाकर रिवाजन ख़र्च करने का हक़ है।

औरत को मारने का हक़

अगर औरत उन कामों को अपनाए जो ज़िना को दावत देते हैं। गाली-गलौच और बदज़बानी करे, या नाशिज़ा (नाफ़रमान) हो या नमाज़ छोड़ती हो, तो पहले तो नसीहत करे अगर इससे न माने तो मुंह लगाना छोड़ दे। फिर डांटे अगर फिर भी न माने और इस्लाह[1] भी मुम्किन न हो तो तलाक़ दे सकता है, जो अल्लाह तआला के नज़दीक नापसन्दीदा है। और जिस से अल्लाह तआला का अर्श हिलता है।

अगर किसी वजह से तलाक़ न देना चाहे तो सब्र करे और नसीहत

---

१. सुधार।

करता रहे। शौहर अपने हक़ पर ज़बरदस्ती भी कर सकता है। वह इन वजहों से बीवी को सुधारने के लिए सज़ा भी दे सकता है और पीट भी सकता है। लेकिन फिर भी ज़्यादा न मारे जिससे जिस्म पर निशान पड़ जाएं या तक्लीफ़ पहुंच जाए। चेहरे पर तमाचा मारना सख़्त मना है। अता फ़रमाते हैं कि मिस्वाक से मारे। इसके अलावा मर्द को मामूली बात पर मारने का हक़ नहीं है, बल्कि सख़्त मना है। एक क़ौल में है कि मर्द को नमाज़ छोड़ने पर भी मारने का हक़ नहीं है, क्योंकि यह हक़ सिर्फ़ अल्लाह तआला का है, मर्द का हक़ नहीं है। --दुर्रे मुख़्तार

इसमें राज़ यह है कि मारने और बुरा भला कहने से दिल में नफ़रत पैदा होती रहती है, जिससे सोहबत करने में ख़लल होता है और दिल में एक दूसरे के लिए प्यार व मुहब्बत नहीं रहती।

नोट--जो औरत अपने मर्द की नाफ़रमान हो यानी बिना किसी शरई हक़ के उसका कोई हक़ अदा न करे उसे 'नाशिज़ा लुग़वी' कहते हैं और अगर औरत बग़ैर शरई हक़ के, बिला इजाज़त मर्द के घर से चली जाए तो वापस आने तक उस औरत का खाना-कपड़ा मर्द पर वाजिब नहीं होता। ऐसी औरत को फ़िक़्ह[1] में नाशिज़ा कहते हैं और औरत अपने वाजिब हक़ की वजह से मर्द के घर न जाए या बग़ैर इजाज़त मर्द के घर से चली जाए तो खाने कपड़े की हक़दार है क्योंकि इसमें उसकी नाफ़रमानी नहीं है।

यह भी याद रहे कि मर्द औरत पर ज़ुल्म करे और उसके हक़ अदा न करे तो फिर औरत पर कोई गुनाह और पकड़ न होगी। इसलिए कि ज़ुल्म का जवाब तो ज़ुल्म करने वाले से मांगा जाएगा।

मियां-बीवी में प्यार व मुहब्बत

मियां-बीवी में निबाह उनके आपसी प्यार एवं मुहब्बत में छुपा हुआ है।

१. कर्म-कांड का सम्बन्धित आचार-संहिता।

मतलब यह है कि मियां-बीवी का रिश्ता दो रिश्तों से मिल कर बना है। यह रिश्ता निरा हाकिम और महकूम का रिश्ता नहीं जो ज़बरदस्ती करे, जैसे ज़ालिम हाकिम अपनी रियाया पर हुकूमत करते हैं और रियाया मजबूरन उनके हुक्मों को मानती है, लेकिन उसको इसमें कोई दिलचस्पी नहीं होती और वह उससे छुटकारे के मौक़ों के इन्तिज़ार में रहती है। जबकि शौहर की हुकूमत अपनी रज़ामन्दी, अपने इरादे और मुहब्बत की वजह से तसलीम की जाती है। विदादी होती है। जैसे पीर व उस्ताद अपने मुरीदों व शार्गिदों पर, अम्बिया अलैहिमुस्सलाम अपनी उम्मत पर और खुल्फ़ाए राशिदीन[1] अपने महकूमीन[2] पर हुक्मरानी फरमाते हैं। और महकूमीन भी दिल व जान से दुनिया व आख़िरत की भलाई समझ कर इताअ़त[3] करते हैं और दिल से वाजिबे इताअ़त मानते हैं। क्योंकि मियां बीवी में एक रिश्ता और भी है यानी महबूबियत[4] का, एक दूसरे से प्यार का। वे एक दूसरे के 'महबूब' हैं, प्यारे हैं। इसलिए अगरचे शौहर हाकिम और बीवी महकूम है लेकिन आपस में महबूबियत का ताल्लुक़ भी है। जैसे कोई आ़दिल हाकिम अपने किसी महकूम पर आशिक़ हो ऐसा शख़्स अपनी माशूक़ महकूमा के साथ कैसा बर्ताव करेगा और कैसे हाकिमाना रुअब रखेगा और कैसा बर्ताव करेगा वैसा ही बर्ताव यहां होना चाहिए और जिस तरह माशूक़ा महकूमा जो अपने हाकिम आशिक़ की इताअ़त और मुहब्बत दोनों का इज़हार करेगी और दिल से इताअ़त करेगी न कि मजबूरन ठीक इसी तरह यहां भी होना चाहिए। अगर मर्द कभी किसी वजह से सख़्ती करे और नसीहत करे तो औरत अपनी इस्लाह के लिए ही समझे न कि दुश्मनी और ज़ुल्म। और अगर किसी वक़्त जवाब दे और लौट-पौट करे तो मर्द इसे उसका नाज़ व नख़रा ही समझे न कि दुश्मनी यानी मियां-बीवी में निबाह की सूरतों का राज़ इन दो लफ़्ज़ों में छुपा हुआ है 'प्यार और मुहब्बत'।

१. शुरू के चारों ख़लीफ़ा।

२. प्रजा।

३. आदेशानुपालन योग्य। ४. प्रेम।

मर्दों को नसीहत

हिन्दुस्तान की अक्सर मुसलमान शरीफ़ औरतों में हूरों की सिफ़तें मौजूद हैं। दुनिया की हूरें यही हिन्दुस्तान की शरीफ़ औरतें हैं। इनमें लाज व शर्म, अस्मत और शौहर की मुहब्बत कूट-कूट कर भरी हुई है। और दूसरे मुल्कों में औरत में यह सिफ़्तें कहां? अगर देखना है तो हिन्दुस्तान की शरीफ़ औरतों को देख लो। चाहे मर्द व औरत में कैसी ही चल गई हो या अभी मियां-बीवी में झगड़ा हो चुका है लेकिन ज़रा मियां को बुख़ार आ गया और कुछ बीमार हो गया तो फिर देखिए इसकी छिपी हुई मुहब्बत का उभार, दिन-रात अपने आराम को मर्द के आराम पर कुर्बान कर देगी। आख़िर यह क्या है? दिन व रात का तजुर्बा है अपने घर की चार-दीवारी में उम्र भर रहने वालियों को अगर कभी स्टेशन पर बुर्का ओढ़ कर सर मुंह छिपा कर मर्दों के सामने चलना पड़े तो फिर इन की चाल को देखिए, मारे लाज के ज़मीन में गड़ी जाती हैं। आंखे ज़मीन से ऊपर ही नहीं उठातीं। उम्र भर अपने मर्द के अलावा और किसी पर नज़र न पड़ी अगर पड़ी भी तो बुरी नीयत का ख़्याल कोसों दूर। अपनी मर्ज़ी को छोड़ मर्द की मर्ज़ी पर चलने वाली चाहे मर्द कितनी ही नफ़रत और ग़लतियां करता हो फिर भी उम्र भर अपने मर्द पर 'साबिर व शाकिर'। उसी से प्यार व मुहब्बत चाहे वह कितना ही बदसूरत और बदमिज़ाज क्यों न हो। अपने ही मर्द के पहलू में निहायत तंगी और फ़ाके से उम्र काटने वालियां, चाहे खुद कितनी ही ख़ूबसूरत हों अपने हक़ को भूल कर उम्र भर अपने शौहर की लौंडियों की तरह प्यार के साथ, मुहब्बत के साथ ख़िदमत करने वालियां, चाहे कितने ही बड़े इज़्ज़तदार ख़ानदान की हों।

भला बताओ ये हूरें नहीं तो और क्या हैं। ऐसी औरतों को दुख देना और उनके हक़ मारना, उनको जानवरों की तरह 'ज़लील व ख़्वार' करना उनसे सख़्ती और कड़ेपन से बात करना और बिला वजह उनकी ख़बर न लेना कितना बड़ा जुल्म है।

ऐ अल्लाह ! तू मेरी कौम को हिदायत दे इसलिए कि वे नासमझ हैं।

ये चन्द सतरें, जनाब मौलवी व हकीम सय्यिद जमीलुद्दीन मियां साहब शाहजहां पुरी के सवाल पर लिखी गई हैं।

--अहक़र मुहम्मद अब्दुल ग़नी गुफ़िर-लहू
मदरसा अरबिया ऐनुल इल्म शाहजहां पुर